पाषाणी

अपूर्वकुमार बी.ए. पास करके ग्रीष्मावकाश में विश्व की महान नगरी कलकत्ता से अपने गांव को लौट रहा था।

मार्ग में छोटी-सी नदी पड़ती है। वह बहुधा बरसात के अन्त में सूख जाया करती है; परन्तु अभी तो सावन मास है। नदी अपने यौवन पर है, गांव की हद और बांस की जड़ों का आलिंगन करती हुई तीव्रता से बहती चली जा रही है।

लगातार कई दिनों की घनघोर बरसात के बाद आज तनिक मेघ छटे हैं और नभ पटल पर सूर्य देव के दर्शन हो रहे हैं।

नौका पर बैठे हुए अपूर्वकुमार के हृदय में बसी हुई प्रतिमा यदि दिखाई देती तो देखते कि वहां भी इस नवयुवक की हृदय-सरिता नव वर्षा से बिल्कुल तट तक भर गई है और सरिता का जल ज्योति से झिल-मिल झिल-मिल और वायु से छप्-छप् कर रहा है।

नौका यथास्थान घाट पर लगी है। नदी के उस तट पर से वृक्षों की आड़ में से अपूर्व के घर की छत स्पष्ट दिखाई दे रही है। घर पर किसी को खबर तक नहीं कि अपूर्व शहर से लौट रहा है, अत: घर पर से लिवाने के लिए कोई नहीं आया? नाविक सूटकेस उठाने के लिए तैयार हुआ तो अपूर्व ने उसे इन्कार कर दिया। वह स्वयं ही सूटकेस हाथ में उठाकर आनन्द की लहर से झटपट नौका से उतर पड़ा।

उतरते ही, घाट पर थी फिसलन, सूटकेस सहित वह दल-दल में गिर पड़ा, और ज्योंही गिरा, त्योंही न जाने किधर से मोटी ऊंची हास लहरी ने आकर समीप के पीपल पर बैठी हुई चिड़ियों को उड़ा दिया।

अपूर्व बहुत ही लज्जित हुआ और झटपट स्वयं को संभाल कर चहुंओर देखने लगा, देखा कि घाट के एक छोर पर जहां महाजन की नौका से नई ईंटें उतारकर इकट्ठी की गई हैं उन्हीं पर बैठी हुई एक नवयौवना हंसते-हंसते लोट-पोट हो रही है।

अपूर्व ने पहचान लिया कि वह उसी के पड़ोसी की लाड़ली बेटी मृगमयी है। पहले इनका घर यहां से बहुत दूरी पर बड़ी नदी के तट पर था। दो-तीन साल गुजरे, नदी की बाढ़ के कारण उन्हें वह स्थान छोड़कर वहां चला आना पड़ा।

मृगमयी के विषय में बहुत कुछ अपवाद सुनने के लिए मिलता है। ग्रामीणवासी पुरुष तो इसे स्नेह के स्वर में पगली कहकर पुकारते हैं; लेकिन उनकी घरवालियां इसके उद्दण्ड स्वभाव से सर्वदा त्रस्त, चिन्तित और शंकित रहा करती हैं। गांव के छोकरों के साथ ही उसका खेल होता है; क्योंकि समवयस्क लड़कियों के प्रति उसकी अवज्ञा की सीमा नहीं। बालकों के राज्य में यह लड़की एक प्रकार से शत्रु-पक्ष की सेना के उपद्रव के समान-सी प्रतीत होती है।

पिता की लाड़ली बिटिया ठहरी और इसीलिए वह इतनी निर्भय रहती है। वास्तव में इस विषय में मृगमयी की मां अपने सहेलियों के आगे हर समय अपने पति के विरुध्द फरियाद किया ही करती, मगर फिर भी यह सोचकर कि पिता बेटी को लाड़ करते हैं और जब ये अवकाश के समय घर रहते हैं तो मृगमयी के नेत्रों के अश्रु उनके

हृदय-पटल पर बहुत ही आघात पहुंचाते हैं, वे प्रवासी पति का स्मरण करके लड़की को किसी भी तरह पीड़ा नहीं पहुंचा सकती?

मृगमयी का रंग देखने में अधिक साफ नहीं है। छोटे-छोटे घुंघराले केश पीठ पर आच्छादित रहते हैं। चेहरे पर बिल्कुल बचपना छाया रहता है। बड़ी-बड़ी कजरारी आंखों में न तो लज्जा है, न भय और न हाव-भाव में किसी प्रकार का संशय? वह लम्बी, परिपुष्ट, स्वस्थ और सबल है। उसकी आयु अधिक है या कम, यह प्रश्न किसी के मन में उठता ही नहीं। यदि उठता तो ग्रामीण पड़ोसी इस बात पर मां-बाप की निन्दा करते कि अभी तक यह कुंवारी ही फिर रही है। जब कभी गांव के विदेशी जमींदार की नौका आकर घाट पर लगती है, तो उस दिन ग्रामीणवासी, उनकी आवभगत में घबरा से जाते हैं, गृहणियों की मुख-रंग-भूमि पर अकस्मात नाक के नीचे तक अवगुंठन खिंच जाता है; परन्तु मृगमयी न जाने कहां के किसी के वस्त्रों से हीन बच्चे को उठाये हुए घुंघराले केशों को पीठ पर बिखेरे जा खड़ी होती है। जिस देश में कोई शिकारी नहीं, कोई मुसीबत नहीं, उस देश की मृगी शावक की तरह निडर खड़ी हुई आश्चर्यचकित-सी देखा करती और अन्त में बाल-संगियों के पास जाकर इस नए मानव के आचार-व्यवहार के विषय में विस्तार के साथ भूमिका बांधती।

हमारे अपूर्वकुमार ने अवकाश के दिनों में घर आकर इससे पहले और भी दो-चार बार इस सीमाहीन नवयौवना को देखा है और फालतू समय में, यहां तक कि काम के समय में भी, इसके विषय में विचार किया है। इस धरा पर बहुत से चेहरे देखने में आते हैं; पर कोई-कोई चेहरा ऐसा होता है कि न कुछ कहना न सुनना, चट से मन के भीतर जाकर ऐसा बस जाता है कि उसे निकालना मुश्किल हो जाता है। केवल सौन्दर्य के कारण ही ऐसा होता है सो बात नहीं, वह तो कुछ और ही है, सम्भवत: वह है स्वच्छता।

अधिकांश चेहरों पर मानव प्रकृति पूरी तौर से अपनी ज्योति से नहीं जगमगा पाती; जिस चेहरे पर हृदय के कोने में छिपा हुआ वह रहस्यमय व्यक्ति बिना रुकावट के बाहर निकलकर दिखाई देता है, वह चेहरा सैकड़ों-हजारों में छिपता नहीं; पल-भर में हृदय-पटल पर अंकित हो जाता है। इस लड़की के चेहरे पर, आंखों पर एक चंचल और उद्दण्ड नारी प्रकृति सदैव स्वच्छन्द और वन के दौड़ते हुए हिरन की तरह दिखाई देती रहती है, भागती-फिरती रहती है और इसलिए ऐसे सलौने चंचल मुख को एक बार देख लेने पर फिर सहज में वह भुलाये नहीं भूला।

पाठकगण को यह बताने की आवश्यकता नहीं कि मृगमयी की कौतुहलता से भरी हास्य-ध्वनि चाहे कितनी ही मृदु क्यों न हो, लेकिन अभागे अपूर्व के लिए वह तनिक कुछ दुखदायी ही साबित हुई? मारे लज्जा के उसका चेहरा सुर्ख हो उठा और हाथ का सूटकेस झट-पट नाविक के हाथ में सौंपकर वह शीघ्रता से अपने घर की ओर चल दिया।

नदी का किनारा, वृक्षों की छाया, पक्षियों का मृदु कलरव, प्रभात की मीठी-मीठी धूप और बीस वर्ष की अवस्था। कतिपय ईंटों का ढेर ऐसा कुछ खास उल्लेख योग्य नहीं; पर उस पर जो मानवी बैठी थी, उसने उस शुष्क और नीरस आसन पर भी एक प्रकार का मूक सौन्दर्य का भाव फैला रखा था। छि:! छि:! ऐसे दृश्य के मध्य में प्रथम पग उठाते ही, जिसका सारा का सारा व्यक्तित्व प्रहसर में परिवर्तित हो जाये तो उसके भाग्य की इससे बढ़कर निष्ठुरता और क्या हो सकती है?

2.ईंटों के ढेर से बहती हुई हंसी की तरंग सुनते-सुनते वृक्षों की छाया के नीचे दलदल में सनी निम्न दुकुल सूटकेस लिये हुए श्रीयुत अपूर्वजी किसी तरह अपने घर पहुँचे?

अकस्मात ही बेटे के पहुंच जाने से विधवा मां मारे उल्लास के फूली न समाई। उसी समय खोया, दही, दूध और बढ़िया मछली की तलाश में दूर-पास सब स्थानों पर आदमी दौड़ाये गये और पास-पड़ोस में भी एक प्रकार की हलचल-सी पैदा हो गई।

भोजन की समाप्ति पर मां ने बेटे के आगे ब्याह का प्रस्ताव छेड़ा। अपूर्व इसके लिए तैयार था ही। कारण यह प्रस्ताव बहुत पहले से ही पेश था, केवल अपूर्व तनिक कुछ नई रोशनी के चक्कर में आकर हठ कर बैठा था कि बी.ए. पास किए बिना विवाह हर्गिज नहीं कर सकता इत्यादि। अब तक उसकी मां उसके पास होने की ही राह देख रही थी; सो अब किसी प्रकार की आपत्ति उठाने के मायने हैं कि झूठी बहानेबाजी। अपूर्व ने कहा- पहले लड़की तो देखो, फिर देखा जायेगा।

मां ने उत्तर दिया- लड़की-वड़की सब देखी जा चुकी है, उसके लिए तुझे फिक्र करने की जरूरत नहीं।

किन्तु अपूर्व उसके लिए स्वयं ही फिक्र करने के लिए उद्यत हो गया, बोला- लड़की बिना देखे मैं विवाह नहीं कर सकता।

मां सोच में पड़ गई। ऐसी अनोखी बात तो आज तक नहीं सुनी थी। फिर भी वह राजी हो गई।

रात को अपूर्व दीपक बुझाकर बिस्तर पर जा पड़ा। पड़ते ही बरसात यामिनी की सारी-की-सारी स्वर लहरी और पूर्व निस्तब्धता के उस पार से उसकी सेज पर एक उच्छ्वासित उच्च मृदु कंठ की हास-ध्वनि आ-आकर उसके कानों में झंकरित होने लगी। उसका अशांत मन स्वयं को बार-बार निरन्तर यह कह-कहकर व्यथित करने लगा कि सवेरे वह जो पैर फिसलकर गिर पड़ा था उसका किसी-न-किसी युक्ति से सुधार कर लेना ही चाहिए? उस नवयौवना को यह मालूम ही नहीं कि मैं अपूर्वकुमार हूं, अचानक फिसलन पर पांव पड़ जाने से दलदल में गिर जाने पर भी मैं कोई उपेक्षणीय गांव का वासी नहीं।

अगले दिन अपूर्व को लड़की देखने जाना था। अधिक दूर नहीं, पड़ोस में ही लड़की वालों का घर है। तनिक कुछ कोशिश करने के बाद ही कपड़े बदन पर डाले। निम्न दुकुल (धोती) और दुपट्टा जोड़कर रेशमी अचकन, सिर पर अमीरी रंग की गोल पगड़ी और पैरों में बढ़िया चमकते हुए जूते पहनकर, रेशमी कपड़े की बढ़िया छतरी हाथ में लटकाये वह सवेरे ही चल दिया।

भावी सुसराल में घुसते ही वहां कोलाहल-सा मच गया। अन्त में यथा समय कम्पित हृदय को झाड़-पोंछकर, रंग-वंग कर, जूड़े में गोटे आदि लगाकर, एक पतली रंगीन साड़ी में लपेटकर उसे भावी पति के सामने लाया गया। आगन्तुका एक कोने में लगभग घुटनों तक माथा झुकाये चुपचाप जड़-वस्तु-सी बैठी रही और उसके पीछे धैर्य बंधाये रखने के लिए खड़ी एक अधेड़ अवस्था की दासी। उसका एक भाई, जोकि अभी बच्चा ही था, अपने परिवार में अनाधिकार प्रवेश करने वाले इस नए व्यक्ति की पगड़ी, घड़ी की चैन और उठती हुई मूंछों की ओर बड़े ध्यान से टकटकी लगाये देखने लगा। अपूर्व ने कुछ देर मूंछों पर हाथ फेरने के बाद अन्त में गम्भीरता के साथ पूछा- तुम क्या पढ़ती हो?

आभूषणों के भार से दबी हुई लज्जा की गठरी में से उसे अपने प्रश्न का कोई भी उत्तर नहीं मिला। दो-चार बार पूछे जाने और अधेड़ दासी द्वारा पीठ पर बारम्बार धैर्य की थपकियां पड़ने के बाद लड़की ने बहुत ही धीमे स्वर में शीघ्रता के साथ एक ही सांस में कहकर छुट्टी पा ली- कन्या बोधिनी दूसरा भाग, व्याकरण सार, भूगोल, अंकगणित और भारत का इतिहास।

इतने में बाहर किसी की तेज चलने की धम-धम की आवाज सुनाई दी और दूसरे ही क्षण दौड़ती-हांफती और पीठ पर केशों को हिलाती हुई मृगमयी वहां पर आ धमकी। उसने अपूर्व की ओर आंख उठाकर देखा तक नहीं, सीधी उस भावी वधू के भाई

राखाल के पास पहुंची और उसके कोमल हाथ को पकड़कर खींचना शुरू कर दिया। राखाल उस समय भावी वधू को देखने में लीन था; वहां से वह किसी भी तरह टस से मस नहीं हुआ? दासी अपने संयत कण्ठ की मृदुता की भरसक रक्षा करती हुई यथासाध्य तीव्रता के साथ मृगमयी को धिक्कारने लगी। अपूर्व अपनी सारी-की-सारी मौनता और यश को एकत्रित करके पगड़ी बंधे माथे को ऊंचा करके बैठा रहा और उदर के पास लटकती हुई घड़ी की चैन को हिलाने लगा।

अन्त में मृगमयी ने जब देखा कि उसका साथी किसी भी तरह विचलित नहीं हो रहा, तब उसने उसकी कमर पर जोर का मुक्का जमा दिया और लगे हाथों भावी वधू के माथे का अवगुंठन उघाड़कर वह आंधी के वेग के समान जिस प्रकार आई थी, उसी प्रकार भाग गई। दासी मन मारकर रह गई और भीतर-ही-भीतर घुमड़कर गरजने लगी। राखाल अचानक अवगुंठन के हट जाने से एकाएक खिलखिला पड़ा। इस खुशी में कमर पर पड़े मुक्के की चोट को भी उसने महसूस नहीं किया कारण, ऐसा लेन-देन अक्सर हुआ ही करता था, इससे किसी प्रकार की आज नवीनता नहीं थी। इसके लिए एक दृष्टान्त ही बहुत है।

एक दिन की बात है, मृगमयी के केश तब पीठ तक बढ़े थे; राखाल ने अचानक पीछे से आकर कैंची से उसके बाल काट दिए; इस पर मृगमयी को बहुत क्रोध आया और उसने चट से राखाल के हाथ से कैंची छीनकर अपने शेष केश बड़ी निर्दयता से कतर-कतरकर उसके मुंह पर दे मारे। मृगमयी के घुंघराले केशों के गुच्छे डाली से गिरे हुए काले अंगूरों के गुच्छों की तरह धरा पर गिर पड़े। इन दोनों में शुरू से ही इस प्रकार की प्रणाली प्रचलित थी।

इसके बाद वह शांत सभा अधिक देर तक न चल सकी। गठरी-सी बनी भावी वधू अपने को बड़ी कठिनता से लम्बी बनाकर दासी के साथ घर के भीतर चली गई। अपूर्व अपनी मूंछों पर हाथ फेरता हुआ उठ खड़ा हुआ। बाहर जाकर देखा कि उसका बढ़िया नया जूता वहां से गायब है। बहुत प्रयत्न करने पर भी इस बात का पता नहीं लगा कि जूते कौन ले गया और कहां गये?

घर वाले सभी बड़े परेशान से हुए और अपराधी के नाम पर अपशब्दों की बौछार होने लगी। जब किसी प्रकार भी जूतों का पता नहीं लगा, तो अन्त में विवश होकर घर के मालिक की फटी-पुरानी ढीली चट्टी पहनकर पतलून पगड़ी से सुसज्जित अपूर्व गांव के कीचड़ वाले रास्ते को बहुत सावधानी के साथ पार करता हुआ घर की ओर चल दिया।

तालाब के किनारे सुनसान पथ पर पहुंचते ही सहसा फिर उसे वही जोर का परिहासात्मक स्वर सुनाई दिया। मानो वृक्ष और पल्लवों की ओट में से कौतुकप्रिया बन देवी ही अपूर्व की उन पुरानी चट्टियों को देखकर एकाएक हंस पड़ी हो।

अपूर्व कुछ लज्जित-सा होकर ठिठक गया और इधर-उधर दृष्टि फेंककर देखने लगा। इतने में सघन झाड़ियों में से निकलकर किसी निर्लज्ज अपराधिनी ने उसके सामने नए जूते रख दिए और चट से बाहर जाने के लिए उद्यत हुई कि अपूर्व ने उसके दोनों हाथ पकड़कर अपनी कैद में ले लिया?

मृगमयी ने यथा-शक्ति टेढ़ी-तिरछी होकर पूरी शक्ति का प्रयोग करके भागने का बहुत प्रयत्न किया; लेकिन सब व्यर्थ। घुंघराले केशों से घिरे हुए उसके गोल-मटोल चेहरे पर सूर्य की किरणें, वृक्षों की डालियों और पल्लवों में छन-छनकर पड़ने लगीं। कौतूहलता से वशीभूत होकर कोई पथिक, जिस प्रकार दिवाकर की किरणों से चमकती हुई स्वच्छ चंचल निर्झरणी की ओर झुककर टकटकी लगाये उसकी तली को देखता रहता है, ठीक उसी तरह अपूर्व ने मृगमयी के ऊपर उठे चेहरे पर तनिक झुककर उसकी खंजन-सी चंचल आंखों के भीतर गहरी दृष्टि फेंककर देखा और फिर बहुत धीमे से उसे अपनी मुट्ठियों के बन्धन से मुक्त कर दिया। अपूर्व क्रोधित मुद्रा में मृगमयी को पकड़कर मारता तो उसे तनिक भी अचम्भा न होता; किन्तु इस प्रकार सुनसान पथ में इस अनोखी सजा का वह कुछ अर्थ ही न समझ सकी।

नर्तन करती हुई प्रकृति नटी के नूपुरों की झंकार की भांति फिर वही हास्य- ध्वनि उस नीरव पथ में गूंज उठी और चिन्तातुर अपूर्व धीरे-धीरे पग उठाता हुआ घर की ओर चल दिया।

3.अपूर्व उस दिन अनेक प्रकार के बहाने बना-बनाकर न तो घर के अन्दर गया और न मां से भेंट की। किसी के यहां भोज का निमंत्रण था; वहीं खा आया। अपूर्व जैसा पढ़ा-लिखा और भावुक नवयुवक एक मामूली पढ़ी-लिखी लड़की के मुकाबले अपने छिपे हुए गौरव का बखान करने और उसे आन्तरिक महत्ता का पूर्ण परिचय देने के लिए क्यों इतना आतुर हो उठा; यह समझना बहुत कठिन है? एक निरी गांव की चंचल बाला ने उसे मामूली नवयुवक समझ ही लिया, तो क्या हो गया? और उसने पल भर के लिए अपूर्व का परिहास करके और फिर उसके अस्तित्व को किसी ताक पर रखकर, राखाल नाम के अबोध बच्चे के साथ खेलने के लिए इच्छा प्रकट की, तो उसमें अपूर्व का बिगड़ ही क्या गया? इन बच्चों के सामने उसे प्रमाणित करने की आवश्यकता ही क्या है कि वह विश्वदीप मासिक पत्र में पुस्तकों की समालोचना

लिखा करता है और उसने सूटकेस में एसन्स, जूते, रूबिनी के कैम्फर, पत्र लिखने के रंगीन कागज और हारमोनियम शिक्षा, पुस्तक के साथ एक पूरी लिखी हुई प्रेस कॉपी, यामिनी के गर्भ में भावी उषा की तरह, प्रज्वलित होने की राह देख रही है; पर मन को समझना कठिन है, कम-से-कम इस देहाती चंचल लड़की के सामने श्री अपूर्वकुमार बी.ए. हार मानने के लिए किसी प्रकार भी तैयार नहीं।

संध्या को अपूर्व जब घर के भीतर पहुंचा, तो उसकी मां ने पूछा- क्यों रे, लड़की देख आया? कैसी है, पसंद है न?

अपूर्व ने कुछ लजाते हुए उत्तर दिया- हां, देख तो आया मां, उनमें से मुझे एक ही लड़की पसन्द है।

मां ने तनिक कुछ आश्चर्यचकित स्वर में पूछा- तूने कितनी लड़कियाँ देखी थीं वहां?

अन्त में दो-चार प्रश्नोत्तर के बाद मां को मालूम हुआ कि उसके लड़के ने पड़ोसिन शारदा की लड़की मृगमयी पसंद की है। इतना पढ़-लिखकर भी यह पसंद।

परिणाम यह निकला कि कमबख्त अड़ियल टट्टू की तरह गर्दन टेढ़ी करके, कुछ पीछे को उठकर कह बैठी- मैं ब्याह नहीं करूंगी, जाओ।

4.इस पर भी उसे ब्याह करना ही पड़ा।

उसके बाद अध्ययन शुरू हुआ। अपूर्व की मां के घर जाकर एक ही रात में मृगमयी की अपनी सारी दुनिया ने बेड़ियां पहन लीं।

सास ने वधू का सुधर करना आरम्भ कर दिया। बहुत ही कठोर मुद्रा बनाकर उससे बोली- देखो बेटी, अब तुम नन्हीं बच्ची नहीं रहीं... हमारे घर में ऐसी बेहाई नहीं चल सकेगी।

सास ने यह बात जिस भाव से कही, मृगमयी ठीक उसे उसी रूप में न समझ सकी। उसने विचारा कि इस घर में यदि न चले, तो शायद कहीं दूसरी जगह जाना पड़ेगा। मध्यान्ह के बाद वह घर में नहीं दिखाई दी। 'कहां गई? कहां गई?' शोर मच गया। ढूंढ़ शुरू हुई। अन्त में विश्वासघातक राखाल ने उसके गुप्त स्थान का पता बताकर, उसे कैद करवा ही दिया। वह बड़-वृक्ष के नीचे श्री राधाकान्तजी के टूटे रथ में जाकर छिप गई थी।

सब ही के सामने मां ने और पास-पड़ोस की गृह-स्त्रियों ने उसे कितना डांटा-फटकारा और लज्जित किया, इसकी कल्पना स्वयं आप ही बना लें तो अच्छा हो?

रात्रि को खूब घनघोर घटाएं छा गईं और रिमझिम-रिमझिम मेह बरसने लगा। अपूर्व ने धीरे से मृगमयी के पास शैया पर जाकर उसके कान में धीमे स्वर में कहा- मृगमयी, क्या तुम मुझे प्यार नहीं करतीं?

मृगमयी ने तत्काल ही कड़क उत्तर दिया- नहीं, मैं तुम्हारे से हर्गिज प्यार नहीं कर सकती। मानो उसने सारी गुस्से की पोटली अपूर्व के माथे पर दे मारी।

अपूर्व ने खिन्न स्वर में पूछा- क्यों, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? इस दोष की सन्तोषजनक कैफियत देना तो कठिन है। अपूर्व ने मन-ही-मन कहा, इस विद्रोह-मन को जैसे भी बने वश में करना ही होगा।

अगले रोज सास ने मृगमयी में विद्रोह भाव के सब लक्षण देखकर उसे अन्दर के कोठे में बन्द कर दिया। पिंजड़े में फंसी नई चिड़िया की तरह पहले तो वह कोठे के अन्दर फड़फड़ाती रही अन्त में जब कहीं से भी भागने का कोई मार्ग दिखाई न दिया तो हताश, क्रोध से उन्मत्त हो बिछौने की चादर की दांत से धज्जियां उड़ा दीं और धरा पर औंधी गिर पड़ी और मन-ही-मन पिता की याद करके रोने-चिल्लाने लगी।

ठीक इस समय धीरे-से कोई उसके समीप जाकर बैठ गया। बड़े स्नेह से उसके धूल-धूसरित केशों को कपोलों पर से एक ओर हटा देने का प्रयत्न करने लगा। मृगमयी ने बड़े जोर से अपना सिर हिलाकर उसका हाथ हटा दिया। अपूर्व ने उसके कानों के पास अपना मुंह ले जाकर बहुत ही कोमल स्वर में कहा- मैंने चुपके से द्वार खोल दिया है, चलो, अपने पीछे के बगीचे में आ जायें।

मृगमयी ने जोर से सिर हिलाते हुए कहा- नहीं।

अपूर्व ने उसकी ठोड़ी पकड़कर उसका मुंह ऊपर को उठाना चाहा और बोला- एक बार देखो तो सही कौन आया है? राखाल धरा पर औंधी लेटी हुई मृगमयी को घूरता हुआ हत्बुध्दि ही द्वार पर खड़ा था। मृगमयी ने बिना मुंह उठाये ही अपूर्व का हाथ झटककर अलग कर दिया। अपूर्व ने कहा-देखो राखाल तुम्हारे साथ खेलने आया है; इसके साथ खेलने नहीं जाओगी।

उसने कुपित स्वर में कहा- नहीं।

राखाल ने भी देखा कि मामला कुछ संगीन है। वह किसी प्रकार वहां से निकल, जान बचाकर भाग गया? अपूर्व चुपचाप बैठा रहा। अब मृगमयी अश्रु बहाकर सो गईं तब वह चुपके से उठा और द्वार की सांकल चढ़ा दबे पांव वहां से चल दिया।

इसके अगले ही रोज मृगमयी को पिता की एक चिट्ठी मिली उसमें उन्होंने प्राणप्यारी बेटी मृगमयी के ब्याह में न आने के कारण विलाप करके अन्त में नव दम्पति को शुभ आशीष दिया था।

मृगमयी ने सास मां के पास जाकर कहा- मैं पिताजी के पास जाऊंगी। सास मां ने अनायास ही वधू की इस असम्भव प्रार्थना को सुनकर उसे फटकार दिया, बोली-पिता का कहीं ठौर-ठिकाना भी है कि ऐसे ही पिताजी के पास जायेगी। तेरा तो हर काम दुनिया से निराला ही है। लाड़ मुझे पसन्द नहीं।

वधू ने कोई उत्तर नहीं दिया? अपने कमरे में जाकर उसने भीतर से द्वार बन्द कर लिया और बिल्कुल निराश मानव, जिस प्रकार देवी-देवताओं से प्रार्थना करता है, उस तरह वह कहने लगी- पिताजी, तुम मुझे ले जाओ यहां से। यहां मेरा कोई नहीं है? मैं यहां जीवित न रह सकूंगी।

अधिक रात चले जाने पर, जब उसके पति निद्रा में खो गये तब वह चुपके से द्वार खोलकर बाहर चल दी। वास्तव में बीच-बीच में मेघों की गर्जन सुनाई देती थी, फिर भी बिजली की रोशनी में रास्ता दिखाई देने लायक काफी रोशनी थी। पिताजी के पास जाने के लिए कौन से रास्ते को पकड़ना चाहिए, मृगमयी को कुछ भी पता न था। उसे तो केवल इतना ही विश्वास था कि जिस रास्ते में पत्रवाहक डाक लेकर जाते हैं, उसी मार्ग से दुनिया के किसी भी ठिकाने पर पहुंचा जा सकता है? मृगमयी भी उसी रास्ते पर चलती रही। चलते-चलते उसके शरीर का चूरा हो गया, रात्रि का लगभग अन्तिम पहर भी खत्म हो चला। सुनसान वन में, जबकि दो-चार पक्षी पंख हिला-हिलाकर अनिश्चित स्वर में बोलना चाहते थे और समय का पूर्ण निर्णय न कर सकने के कारण दुविधा में फंस चुप रह जाते थे, उस समय मृगमयी सड़क के किनारे नदी के तट पर के बाजार में पहुंची। इसके बाद, वह विचार कर रही थी कि अब किस ओर चलना चाहिए, इतने में उसे परिचित 'झमझम' शब्द सुनाई दिया? थोड़ी देर में कन्धे पर चिट्ठियों का थैला लटकाए हांफता हुआ पत्रवाहक 'खट' आ पहुंचा। मृगमयी जल्दी से उसके पास जाकर करुण स्वर में बोली-

'कुशीगंज' में पिताजी के पास जाऊंगी, तुम मुझे साथ ले चलो न।

उसने उत्तर दिया- कुशीगंज कहां है, इसका मुझे नहीं मालूम। छोटा-सा उत्तर देकर वह घाट पर जा पहुंचा और घाट पर बंधी हुई डाक की नौका में बैठकर नाविक को जगाकर नौका खुलवा दी। उस समय उसे किसी पर दया करने या पूछ-ताछ करने की फुर्सत नहीं थी।

देखते-देखते बाजार और घाट सजग हो गये। मृगमयी ने घाट पर पहुंचकर एक नाविक से कहा- मुझे कुशीगंज पहुंचा सकोगे।

उस नाविक ने उत्तर देने से पहले ही, बगल की नौका पर से कोई बोल उठा- अरे कौन है? मृगी बिटिया, तू यहां कैसे आई?

मृगमयी ने व्यग्रता से उत्तर दिया-बनमाली! मैं पिताजी के पास कुशीगंज जाऊंगी, तू अपनी नौका पर मुझे ले चल।

बनमाली उसके गांव का ही नाविक था। वह उस उच्छृंखल मानवी को भली-भांति पहचानता था। उसने पूछा- बाबूजी के पास जायेगी बिटिया। बड़ी अच्छी बात है। चल, मैं तुझे पहुंचा दूं।

मृगमयी नौका पर जा बैठी

नाविक ने नौका छोड़ दी। मेघों ने अश्रु बहाना शुरू कर दिया। सावन-भादों के समान पूरी चढ़ी हुई नदी के थपेड़े नौका को जोर से हिलाने लगे। मृगमयी का सारा शरीर थकावट और नींद के मारे टूटने-सा लगा, आंखें नींद से बोझिल हो गईं और वह आंचल बिछाकर लेट रही और लेटते ही वह चंचल नवयौवना नदी के हिंडोले में प्रकृति के स्नेह छाया में पालित शिशु की तरह बेधड़क सो गई।

आंख खुली, तो देखा कि वह अपनी ससुराल में पड़ी सो रही है। उसे जगते देख, महरी बड़बड़ाने लगी। उसका बड़बड़ाना सुनकर सास मां भी आ पहुंची और जो मन में आया वह कहा। मृगमयी आंखें फाड़-फाड़कर शांत हो उनके मुख की ओर देखती रही। अन्त में सास मां ने भी जब उसके पिता की शिक्षा पर व्यंग करना शुरू कर दिया तब मृगमयी ने जल्दी से उठ, बगल की कोठरी में घुसकर अन्दर से द्वार बन्द कर लिया।

अपूर्व ने लाज को बिल्कुल ही ताक पर रखकर मां से कहा, मां! वधू को दो-चार दिन के लिए उसके घर ही भेज देने में कोई हर्ज की बात नहीं?

मां ने अपूर्व को बुरी तरह आड़े हाथों लिया, बोली- नपूते! दुनिया में इतनी लड़कियां होते हुए भी न जाने, कहां से छांट-छांट के ऐसी हड़जाल को मेरी छाती पर डाल दिया।

इस प्रकार के कटु शब्द अपूर्व को निर्दोष होते हुए भी सुनने पड़े।

5.उस रोज सारे दिन घर के बाहर बूंदा-बांदी और अन्दर अश्रु की वर्षा होती रही।

अगले रोज अर्धरात्रि को अपूर्व ने मृगमयी को धीरे-से जाकर पूछा- मृगमयी, क्या तुम अपने पिताजी के पास जाना चाहती हो?

मृगमयी ने चौंककर जल्दी से अपूर्व का हाथ पकड़कर कृतज्ञ कंठ से उत्तर दिया-हां।

तब अपूर्व ने चुपके से कहा- तो चलो, हम दोनों चोरी-चोरी भाग चलें। मैंने घाट पर नौका प्रबन्ध कर रखा है।

मृगमयी ने इस बार कृतज्ञ दृष्टि से अपूर्व की ओर देखा और उसके बाद तत्काल ही उठ, कपड़े बदल, चलने के लिए उद्यत हो गई। अपूर्व ने मां को किसी प्रकार की फिक्र न हो, इसलिए एक पत्र लिखकर रख दिया और रात्रि के नीरव पहर में घर से निकल पड़े।

मृगमयी ने उस नीरव और शान्त अंधेरी में पहली ही बार अपने मन से पूर्ण अवस्था एवं विश्वास के साथ पति का हाथ पकड़ा; उसके अपने ही हृदय का उद्वेग उस स्पर्श मात्र से अपूर्व की नसों में भी संचारित होने लगा।

नौका उसी रात्रि के नीरव पहर में वहां से चल दी। अकस्मात् खुशी के होते हुए भी मृगमयी को बहुत जल्दी ही नींद ने आ दबाया। अगले रोज आनन्द-ही-आनन्द था। दोनों ओर कितने ही बाजार, खेत और जंगल दिखाई दे रहे थे। इधर-उधर कितनी ही नौकाएं आ-जा रही थीं। मृगमयी उन्हें देखकर पूछने लगी- उस नौका पर क्या है? ये लोग कहां से आ रहे हैं, इस स्थान को क्या कहते हैं? ये सवाल ऐसे पेचीदा थे जो अपूर्व ने कभी कॉलिज की किताबों में कहीं नहीं पढ़े थे और उसके कलकत्ता जैसी महानगरी के तजुर्बे के बाहर थे। फिर भी उसके मन को संतुष्ट करने के लिए जो भी उत्तर दिये थे, वे सब मृगमयी को बहुत अच्छे लगे थे।

दूसरी संध्या को नौका, कुशीगंज के घाट पर जा लगी। पास में ही टीन के एक छोटे से झोंपड़े में, मैली-सी धोती बांधे, कांच की भद्दी लालटेन जला, छोटे से डेक्स पर एक चमड़े की जिल्द वाला बड़ा-सा रजिस्टर रखकर, नंगे बदन, स्टूल पर बैठे, ईशानचन्द्र

कुछ लिख-पढ़ रहे थे। इसी समय इस नव दम्पति ने झोंपड़े में प्रवेश किया। मृगमयी ने पुकारा- पिताजी। उस झोंपड़ी में आज तक ऐसी मृदु ध्वनि इस प्रकार से पहले और कभी नहीं सुनाई दी थी।

ईशान के नेत्रों से टप-टप आंसू गिरने लगे। उस समय वे निश्चय न कर सके कि उन्हें क्या करना चाहिए। उनकी बिटिया और दामाद मानो साम्राज्य के युवराज और युवराज्ञी हैं। यहां पटसन के ढेर के बीच में उनके बैठने लायक स्थान कैसे बनाया जा सकता है? इसी के निर्णय हेतु उनकी भटकती हुई बुध्दि और भी भटक गई और खाने-पीने का प्रबन्ध? यह भी दूसरी चिन्ता की बात थी। निर्धन बाबू अपने हाथ से दालभात पकाकर किसी प्रकार पेट भर लेता है, पर आज इस खुशी के अवसर पर क्या खिलाए और क्या करे?

मृगमयी पिता को असमंजस में देखकर फौरन बोली- पिताजी, आज हम सब मिलकर रसोई तैयार करेंगे।

अपूर्व ने इस नवीन प्रस्ताव पर उत्साह प्रगट किया। उस छोटी-सी झोंपड़ी में स्थान की कमी, आदमी की कमी और अन्न की बहुत कमी थी। लेकिन छोटे से छिद्र में से जिस प्रकार फौव्वारा चौगुने वेग से छूटता है, उसी प्रकार निर्धनता के सूक्ष्म सुराख से खुशी का फौव्वारा तीव्रता से छूटने लगा।

इसी प्रकार तीन दिन बीत गये। दोनों समय नियमित रूप से स्टीमर आता, यात्रियों का आना-जाना और शोरगुल सुनाई देता था, लेकिन संध्या के समय नदी का तट बिल्कुल सुनसान हो जाता था तब अपूर्व एक अनोखी स्वतन्त्रता का अनुभव किया करता था। तीनों मिलकर कहीं-कहीं रसोई तैयार किया करते थे। उसके बाद नई-नई चूड़ियों से भरे हाथों से उसका परोसा जाना, श्वसुर और जमाता का सम्मिलित रूप से भोजन करना और नई गृहिणी के भोजन की त्रुटियों पर परिहास किया जाना, इस पर मृगमयी का अभिमान करना, इन सब बातों से सबका मन पुलकित हो उठता था।

अन्त में अपूर्व ने कहा कि अब अधिक दिन ठहरना उचित नहीं। मृगमयी ने कुछ और दिन ठहरने की प्रार्थना की। लेकिन ईशान बाबू ने कहा- नहीं, अब नहीं।

विदा बेला पर बिटिया को छाती से लगा, उसके माथे पर स्नेहसिंचित हाथ को रखकर अश्रुमिश्रित स्वर में ईशानचन्द्र ने कहा-बिटिया, तू अपनी ससुराल में ज्योति जगाना, लक्ष्मी बनकर रहना...जिससे मेरे में कोई दोष न निकाल सके।

मृगमयी अश्रु बहाती हुई अपने पति के साथ विदा हो गई और ईशान बाबू अपनी उसी झोंपड़ी में लौटकर उसी पुराने नियम के अनुसार माल तोलकर दिन पर दिन और मास पर मास बिताने लगे।

6.दोनों अपराधियों की युगल जोड़ी अब घर पहुंची तो मां गम्भीर बनी रही, किसी से कुछ बात नहीं की? मां की ओर से किसी के व्यवहार में कोई दोष ही प्रदर्शित नहीं किया गया कि जिसकी सफाई के लिए दोनों में से कोई कुछ प्रयत्न करता? इस शान्त अभियोग ने, इस मूक अभियान ने, पर्वत की तरह सारी घर-गृहस्थी को अटल होकर दबा रखा।

जब यह सहन शक्ति से बाहर की बात हो गई तो अपूर्व ने कहा- मां, कॉलेज खुल गया है, अब मुझे कानून पढ़ने जाना है। मां ने कुछ उदासीनता प्रकट करते हुए कहा-बहू का क्या करोगे? अपूर्व ने कहा- यहीं रहेगी।

मां ने उत्तर दिया- ना बेटा, यहां पर उसकी जरूरत नहीं। उसे तुम अपने साथ ही लेते जाओ।

अपूर्व ने अभिमान पीड़ित स्वर में कहा-जैसी इच्छा।

कलकत्ता लौटने की तैयारी मां करने लगी। लौटने के एक दिन पहले, रात को अपूर्व जब अपने कमरे में विश्राम के लिए गया, तो देखा कि मृगमयी शैया पर पड़ी रो रही है।

अनायास ही उसके हृदय को चोट पहुंची। व्यक्त स्वर में बोला- मृगमयी! मेरे साथ महानगरी चलने को मन नहीं चाहता क्या?

मृगमयी ने उत्तर दिया- नहीं।

अपूर्व ने पुन: पूछा- क्या तुम मुझसे प्रेम नहीं करतीं?

इस प्रश्न का कुछ भी उत्तर न मिला। विशेषतया इस प्रकार के प्रश्न का उत्तर बहुत ही सरल हुआ करता है; किन्तु कभी-कभी इसके अन्दर मन:स्तर की इतनी जटिलता होती है कि कन्या से ठीक वैसे उत्तर की आशा नहीं की जा सकती।

अपूर्व ने प्रश्न किया- राखाल को छोड़कर यहां से चलने की इच्छा नहीं होती है क्या?

मृगमयी ने बड़ी सुगमता से उत्तर दिया-हां।'

इसे सुनकर बी. ए. पास अपूर्व के हृदय में सुई के बराबर बालक राखाल की ओर से ईर्ष्या का अंकुर उठ खड़ा हुआ। बोला- बहुत दिनों तक गांव नहीं लौट सकूंगा। शायद दो-ढाई साल या इससे भी अधिक समय लग जाये।

इसके विषय में कुछ न कहकर मृगमयी बोली- वापस आते समय राखाल के लिए एक बढ़िया-सा राजस का चाकू लेते आना।

अपूर्व लेटे हुए था; तनिक उठकर बोला-तो तुम यहीं रहोगी।

मृगमयी ने उत्तर दिया- हां, अपनी मां के पास जाकर रहूंगी।

अपूर्व ने ठंडी-सी उच्छ्वास छोड़ी, बोला-अच्छा, वहीं रहना। अब जब तक बुलाने की चिट्ठी नहीं लिखोगी, मैं नहीं आऊंगा। अब तो खुश हो न।

मृगमयी ने इस प्रश्न का उत्तर देना व्यर्थ समझा और सोने लगी; किन्तु अपूर्व को नींद नहीं आई, तकिया ऊंचा किये उसके सहारे बैठा रहा।

रात्रि के अन्तिम पहर में सहसा चन्द्रमा दिखाई दिया और उसकी चांदनी बिस्तर पर आकर फैल गई। अपूर्व ने उस रोशनी में मृगमयी के चेहरे की ओर देखा। देखते-देखते उसे ऐसा महसूस हुआ कि रूप कथा की शहजादी को किसी ने चांदी की छड़ी छुआकर अचेत कर दिया हो। एक बार फिर सोने की छड़ी छुआते ही इस सोती हुई आत्मा को जगाकर उससे बदली की जा सकती है। चांदी की छड़ी परिहास है और सोने की छड़ी कुन्दन।

भोर से पहले ही अपूर्व ने मृगमयी को जगा दिया, बोला, मृगमयी, मेरे चलने का समय आ गया है। चलो, मैं तुम्हारी मां के पास छोड़ आऊं।

मृगमयी बिस्तर से उठकर चलने के लिए तैयार हो गई। अपूर्व ने उसके दोनों हाथों को हाथों में लेकर कहा- अब एक विनती और है, मैंने कितने ही अवसरों पर तुम्हारी सहायता की है, आज परदेश जाते समय तुम मुझे उसका इनाम दे सकोगी।

मृगमयी ने आश्चर्य के साथ पूछा- क्या?

अपूर्व ने कहा- स्वेच्छा से केवल एक चुंबन दे दो।

अपूर्व की इस अनोखी विनती और शान्त चेहरे को देखकर मृगमयी हंसने लग गई, और फिर बड़ी कठिनाई से हंसी को रोककर वह चुंबन देने के लिए आगे बढ़ी। अपूर्व

के मुंह के पास मुंह ले जाकर उससे न रहा गया, खिलखिलाकर हंस पड़ी। इस प्रकार दो बार किया और अन्त में शांत होकर आंचल से मुंह ढंककर हंसने लगी। जब कुछ न बन पड़ा तब अपूर्व ने डांटने के बहाने उसके कान खींच लिये।

अपूर्व ने भी बड़ी भारी प्रतिज्ञा कर रखी थी कि वह जबर्दस्ती से कभी भी मृगमयी से कुछ नहीं लेगा; क्योंकि इसमें वह अपना अपमान समझता था। उसकी इच्छा थी कि देवताओं के समान सगौरव रहकर स्वेच्छा से भेंट किए हुए उपहार को पाये, और अपने हाथ से उठाकर कुछ भी न ले।

मृगमयी फिर न हंसी। अपूर्व उसे उषा की प्रथम किरणों में निर्जन पथ से उसकी मां के घर छोड़ आया फिर लौटकर मां से बोला- मां! बहुत सोच-विचार कर इस निर्णय पर पहुंचा कि वधू को कलकत्ता ले जाने से पढ़ाई में बहुत नुकसान होगा और फिर उसकी वहां कोई साथिन भी तो नहीं है... तुम तो उसको अपने पास रखना नहीं चाहतीं। इसलिए मैं उसे उसके घर छोड़ आया हूं।

इस प्रकार गर्व के चूर्ण में ही मां पुत्र का विच्छेद हुआ।

7.मां के घर पहुंचकर मृगमयी को पता लगा कि अब यहां उसका किसी प्रकार मन ही नहीं लगता है? उस घर में जाने कौन-सा परिवर्तन आ गया है कि समय काटे नहीं कटता। क्या करे, कहां जाये, किससे मिले, उसकी कुछ भी समझ में नहीं आया?

थोड़े ही दिनों में मृगमयी को कुछ ऐसा लगने लगा, कि घरबार और गांव भर में कोई आदमी ही नहीं है? अब कलकत्ता जाने को उसका मन इतना आतुर क्यों है, पहले ऐसा क्यों नहीं था? यह उलझन उसकी समझ में नहीं आई। उसने वृक्ष के शुष्क पत्ते के समान ही डंठल से गिरे हुए उस अतीत जीवन को आज अपनी इच्छा से अनायास ही दूर फेंक दिया।

प्राचीन कथाओं से सुना जाता है कि पहले निपुण अस्त्रकार ऐसी बारीक खड्ग बना सकते थे कि जिससे आदमी को काटकर दो टुकड़े कर देने पर भी उसे मालूम नहीं पड़ता और जब उसे हिलाया जाता था तो उसके दो टुकड़े हो जाते थे। विधाता की खड्ग ऐसी ही सूक्ष्म है, कि कब उन्होंने मृगमयी के बचपन और जवानी के बीच वार किया, वह जान ही न सकी। आज न जाने कैसे तनिक हिल जाने से उसका बचपना जवानी से अलग जा गिरा, और तब वह आश्चर्यचकित होकर देखती ही रह गई।

मायके में उसकी वह चिर-परिचित कोठरी उसे अपनी नहीं मालूम पड़ी। जो मृगमयी वहां काम करती थी, अब मालूम हुआ कि यहां रही ही नहीं। अब उसके हृदय की सारी स्मृति एक-दूसरे ही घर में, दूसरे ही कमरे में, दूसरी ही शैया के आस-पास गूंजती हुई उड़ने लगी। मृगमयी अब बाहर नहीं दिखाई पड़ती, उसकी हास्य-ध्वनि अन्दर ही घुटकर रह जाती। उसका बचपन का साथी राखाल तो उसे देखकर त्रस्त हो भाग जाता, खेलकूद की बात तो अब उनके मन में ही नहीं आती।

मृगमयी ने अपनी मां से कहा- मां, मुझे सास मां के घर ले चल।

उधर कलकत्ते जाते समय बेटे की उदासीनता को याद करके मां का हृदय विदीर्ण हो रहा था। क्रोध में आकर वधू को वह अपनी ससुराल छोड़ आया, यह बात उसके मन में सुई की तरह चुभने लगी थी।

इतने में एक दिन अवगुंठन डाले मृगमयी आ पहुंची। चेहरा उसका मुर्झा-सा गया था और उसने सास मां के चरणों का स्पर्श किया। आशीष देने के स्थान पर सास मां की आंखों में अश्रु भर आये और उसी क्षण मृगमयी को उठाकर जलते हुए कलेजे से लगा लिया। उसी क्षण दोनों का मिलाप हो गया। मृगमयी के चेहरे की ओर निहारकर सास मां को बड़ा आश्चर्य हुआ। अब वह पहली मृगमयी नहीं रही थी, ऐसा परिवर्तन तो कतिपय सबके लिए सम्भव नहीं। ऐसे परिवर्तनों के लिए बड़ी ताकत की आवश्यकता होती है। सास मां ने बहुत सोच-समझकर निश्चय किया था कि वधू के सारे दोषों को धीरे-धीरे से सुधारेगी, किन्तु यहां तो पहले से ही किसी विशेष सुधरक ने उसे नव-जीवन दे डाला था।

अब वधू ने सास मां को अच्छी तरह पहचान लिया था; और सास मां ने उसको। मृगमयी के हृदय में आषाढ़ माह के सजल मेघों के समान अश्रुओं से पूर्ण गर्व उमड़ने लगा। उस गर्व से उसकी बड़ी-बड़ी आंखों की छायादार घनी पलकों पर और भी गहरा आवरण डाल दिया। वह मन-ही-मन अपूर्व से कहने लगी, मैं अब तक अपने को न समझ सकी तो न सही पर तुमने मुझे क्यों नहीं समझने का प्रयत्न किया? तुमने मुझे दण्ड क्यों नहीं दिया? तुमने अपनी इच्छा के वशीभूत ही क्यों नहीं चलाया? मुझ डाइन ने जब तुम्हारे साथ महानगरी चलने को इन्कार किया, तो तुम मुझे जबर्दस्ती पकड़कर क्यों नहीं ले गये? तुमने मेरा कहना क्यों पूरा किया? मेरे हठ के आगे क्यों झुके? मेरी अवज्ञा को क्यों सहन किया?

इसके उपरान्त, फिर उसे उस दिन की याद आई, पहले पहल जिस दिन अपूर्व सवेरे तालाब के किनारे सुनसान रास्ते में उसे बन्दी बना कर मुंह से कुछ न कहकर केवल उसके मुख की ओर निहारता रहा था। उस दिन के उस तालाब की, उस पथ की, वृक्ष की नीचे उस छाया की, भोर की उस सुनहली धूप की, हृदय भार से झुकी हुई उस गहरी चितवन की उसे स्मृति छा गई और सहसा उसका पूरा-पूरा अर्थ अब उसकी समझ में आ गया था। इसके उपरान्त विदा की बेला पर जिस चुंबन को वह अपूर्व के होंठों तक ले जाकर लौटा आई थी वह अधूरा चुंबन अब मरु-मरीचिका की ओर तृषित मृग की तरह उत्तरोत्तर तीव्रता के साथ उन बीते हुए दिनों की ओर उड़ान भरने लगा किन्तु तृष्णा उसकी किसी प्रकार भी न मिट सकी। अब रह-रहकर उसके मन में यही बातें उठा करतीं; यदि, उस समय तू ऐसा करती, उनकी बात का यदि ऐसा उत्तर देती, तब ऐसा करती।

अपूर्व के मस्तिष्क में इस बात का बड़ा दु:ख रहा कि मृगमयी ने उसे अच्छी तरह पहचाना नहीं और मृगमयी ने भी आज बैठे-बैठे यही सोचा कि उन्होंने उसे क्या समझा होगा, क्या सोचते होंगे? अपूर्व ने उसे पाषाणी चंचल, उद्दण्ड, नादान लड़की समझ लिया होगा। लबालब भरे हुए तरलामृत की धारा से अपनी प्रेम तृष्णा मिटाने में उसे समर्थ नवयौवना नहीं जाना। इस वेदना से धिक्कार के मारे लज्जा से वह धारा में धंसी जा रही थी और प्रियतम के चुंबन और सुहाग के उस ऋण को वह अपूर्व के तकिए को दे-देकर उऋण होने का प्रयत्न करने लगी।

इसी प्रकार काफी दिन बीत गए।

चलते समय अपूर्व कह गया था, जब तक तुम्हारा पत्र नहीं आयेगा, तब तक मैं नहीं आऊंगा। मृगमयी इसी बात को याद कर, कमरे का द्वार बन्द कर, एक दिन पत्र लिखने के लिए बैठी अपूर्व ने जो सुनहरी किरणों के कागज दिये थे उन्हें निकालकर बैठी-बैठी विचारने लगी, क्या लिखे? बड़े यत्न के बाद हाथ जमा कर टेढ़ी-मेढ़ी रेखायें अंकित कर उंगलियों में स्याही पोत कर छोटे-बड़े अक्षरों में ऊपर सम्बोधन बिना किए ही एकदम लिख दिया- तुम मुझे चिट्ठी क्यों नहीं भेजते? तुम कौन हो? घर चले आओ और क्या होना चाहिए? वह सोचकर भी किसी निर्णय पर न पहुंच सकी? अन्त में उसने कुछ विचार कर लिया- अब मुझे चिट्ठी लिखना और कैसे रहते हो सो लिखना; जल्दी आना सब अच्छी तरह हैं और कल हमारी काली गाय के बछड़ा हुआ है। इतना लिखकर चिट्ठी लिफाफे में बन्द कर दी और फिर हृदय के प्यार से

सिंचित शब्दों में लिख दिया श्रीयुत अपूर्वकुमार राय। प्यार चाहे कितना ही उड़ेला गया हो, किन्तु तो भी रेखा सीधी, अक्षर सुन्दर और लिखावट सही नहीं हुई।

लिफाफे पर नाम के सिवा और कुछ लिखना भी आवश्यक है, मृगमयी इस बात से परिचित न थी।

कहीं सास मां या कोई और न देख ले, इस भय से लिफाफे को विश्वस्त दासी के हाथ डाक में डलवा दिया।

कहने की आवश्यकता नहीं कि उस पत्र का कुछ फल नहीं निकला और अपूर्व घर नहीं लौटा।

8.मां ने देखा कि कॉलेज बन्द हो गया, फिर भी अपूर्व घर नहीं आया। सोचा, अब भी वह उनसे गुस्से है। मृगमयी ने भी समझ लिया कि अपूर्व उससे गुस्सा कर रहा है और तब वह अपने पत्र की याद करके, मारे लज्जा के गड़ जाने लगी। वह पत्र उसका कितना तुच्छ और छोटा था। उसमें तो कोई बात ही नहीं लिखी गई, उसने अपने मन के भाव तो उसमें लिखे ही नहीं...फिर उनका ही क्या दोष? यह सोच-सोचकर वह तीर बिंधे शिकार की तरह भीतर-ही-भीतर तड़पने लगी। दासी से उसने बार-बार पूछा- उस पत्र को तू डाक में डाल आई थी। दासी ने उसे कितनी ही बार समझाया- हां, बहूजी, मैं खुद चिट्ठी को डिब्बे में डाल आई हूं। बाबूजी को वह मिल भी गई होगी।

अन्त में अपूर्व की मां ने मृगमयी को पास बुलाकर पूछा- बहू, वह बहुत दिनों से घर नहीं आया, मन चाहता है कि कलकत्ता जाकर उसे देख आऊं, क्या तुम साथ चलोगी?

मृगमयी जबान से कुछ न कह सकी; परन्तु स्वीकृति रूप में सिर हिला दिया और अपने कमरे में जाकर, तकिए को छाती से लगाकर, इधर से उधर करवटें बदलकर, हृदय के आवेश को दबाकर हल्की होने का प्रयत्न करने लगी और इसके बाद भावी आशंका के विषय में सोचकर रोने लगी।

अपूर्व को सूचित किए बिना ही दोनों उसकी शुभकामना चाहती हुई कलकत्ता को चल दी।

अपूर्व की मां कलकत्ते में अपने दामाद के यहां ठहरी। उसी दिन संध्या को अपूर्व मृगमयी के पत्र की आस छोड़कर और वचन को भंग करके स्वयं ही पत्र लिखने के

लिए बैठा था तभी उसे जीजाजी का पत्र मिला कि तुम्हारी मां आई हैं। जल्दी आकर मिलो और रात को भोजन यहीं करना, समाचार सब ठीक है। इतना पढ़ने पर भी उसका मन किसी अमंगल सूचना की आशंका कर घबरा उठा। वह तुरन्त ही कपड़े बदल, जीजाजी के घर की ओर चल दिया। मिलते ही उसने मां से पूछा- मां, सब मंगल तो है।

मां ने कहा- सब देवी की कृपा है। छुट्टियों में तू घर क्यों नहीं आया, इसीलिए मैं तुझे लेने आई हूं?

अपूर्व ने कहा- मेरे लिए इतनी तकलीफ उठाने की क्या जरूरत थी मां! मैं तो कानून की परीक्षा के कारण...

ब्यालू करते समय दीदी ने पूछा- भइया! उस समय भाभी को तुम साथ ही क्यों नहीं लेते आये।

भइया ने गम्भीरता के साथ कहा- कानून की पढ़ाई थी दीदी।

जीजा ने हंसकर कहा- यह सब तो बहाना है, असल में हमारे डर से लाने की हिम्मत नहीं पड़ी।

दीदी बोली- बड़े डरपोक निकले भइया। कहीं इस डर से बुखार तो नहीं चढ़ा।

इस तरह हंसी-मजाक चलने लगा, परन्तु अपूर्व वैसे ही उदासीन बना रहा। मां जब कलकत्ते आई, तब मृगमयी भी चाहती तो वह भी कलकत्ते आ सकती थी, पाषाणी कहीं की। इस प्रकार सोचते-सोचते उसे सारा मानव-जीवन व्यर्थ-सा प्रतीत होने लगा।

ब्यालू के बाद बड़ी जोर की आंधी आई और बहुत तेज वर्षा होने लगी। दीदी ने कहा- भइया, आज यहीं रह जाओ।

अपूर्व ने कहा- नहीं दीदी, मुझे जाना ही होगा, बहुत-सा काम पड़ा है।

जीजा ने कहा- ऐसी रात में तुम्हें क्या काम है? एक रात को ठहर ही जाओगे तो कौन-सा काम बिगड़ जायेगा?

बहुत कहने-सुनने के उपरान्त अनिच्छा से अपूर्व को उस रात दीदी के पास ठहरना पड़ा।

राजी हो जाने पर दीदी ने कहा- भइया, तुम थके हुए दिखाई देते हो, अब चलकर आराम कर लो।

अपूर्व की यही इच्छा थी कि शैया पर अंधेरे में अकेले जाकर सो रहे तो उसकी जान बचे। बातें करना भी तो उसे बुरा लगता था।

सोने के लिए जिस कमरे के द्वार तक उसे पहुंचाया गया, वहां जाकर देखा कि भीतर अन्धकार छाया था। दीदी ने कहा-डरो मत भइया, हवा से बत्ती बुझ गई मालूम होती है, दूसरी बत्ती लिये आती हूं।

अपूर्व ने कहा**-** नहीं दीदी, अब उसकी आवश्यकता नहीं है। मुझे अंधेरे में ही सोने की आदत है।

दीदी के चले जाने पर अपूर्व अंधकार से भरे कमरे में सावधानी के साथ शैया की ओर बढ़ा।

शैया पर बैठना चाहता था कि इतने में चूड़ियों के खनकने की आवाज सुनाई दी और कोमल बाहुपाश में वह बुरी तरह जकड़ गया। उन्हीं क्षणों पुष्प से कोमल व्याकुल ओष्ठों ने डाकू के समान आकर अविरल अश्रु धारा के भीगे हुए चुम्बनों के मारे उसे आश्चर्य प्रकट करने तक का अवसर न दिया।

अपूर्व पहले तो चौंक पड़ा। इसके बाद उसकी समझ में आया कि जो काम वह पाषाणी को मनाने के लिए अधूरा छोड़ आया था, उसे आज अश्रुओं के वेग ने पूर्ण कर दिया है।

कहानी : मुख्य सूची